दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

नि.या. 234/2008 और नि.या.235/2008

निर्णय की तिथि : 02.07.2008

मेसर्स एस.के. ब्रदर्स ..... डिक्री धारक

द्वारा : श्री एस.के.जैन, अधिवक्ता

बनाम

दिल्ली विकास प्राधिकरण .....निर्णित ऋणी

द्वारा : निमो

और

मैसर्स अशोक कुमार और कंपनी .....डिक्री धारक

द्वारा : श्री एस.के.जैन, अधिवक्ता

बनाम

दिल्ली विकास प्राधिकरण ..... निर्णित ऋणी

द्वारा : निमो

कोरम :-

माननीय न्यायमूर्ति श्री राजीव सहाय एंडलॉ

1. क्या स्थानीय समाचार पत्रों के संवादाताओं को निर्णय देखने की अनुमति दी जाएगी ? हाँ

2. रिपोर्टर को भेजा जाए या नहीं ? हाँ

3. क्या निर्णय की सूचना डाइजेस्ट में प्रकाशित कि जानी चाहिए? हाँ

<u>न्या. राजीव सहाय एंडलॉ.</u> (मौखिक)

1. निष्पादन याचिका 234/2008 दिनांक 16 जनवरी, 2008 के माध्यस्थम पंचाट के निष्पादन के लिए दायर की गई है और निष्पादन आवेदन के पैरा 7 में डिक्री के अनुसार ब्याज सहित वाद की राशि अथवा डिक्री द्वारा प्रदान की गई किसी अन्य राहत के रूप में 2 जुलाई, 2008 से राशि की वसूली की तारीख तक 18% वार्षिक ब्याज के साथ 15,80,83361 रुपए की ब्याज दर पर ब्याज प्राप्त किया है। माध्यस्थम पंचाट 500 रुपये के स्टाम्प पेपर पर वर्णित है।

2. दिनांक 20 दिसम्बर, 2007 के माध्यस्थम पंचाट के निष्पादन के लिए निष्पादन याचिका 235/2008 दायर की गई है। आवेदन के पैरा 7 में डिक्री के अनुसार ब्याज सहित वाद की राशि अथवा डिक्री द्वारा प्रदान की गई किसी अन्य राहत को 2 जुलाई, 2008 से राशि वसूल किए जाने की तारीख तक 18% वाषक ब्याज सहित 19,02,725/- रुपए बताया गया है। मध्यस्थ पंचाट 800 रुपये के स्टाम्प पेपर पर वर्णित है।

3. दोनों निष्पादन याचिकाएं पहली बार दिनांक. 1 जुलाई, 2008 को न्यायालय के समक्ष आईं। डिक्री धारक के लिए अधिवक्ता को यह बताया गया कि चूंकि दोनों ही निष्पादनों में राशि 20 लाख रुपये से कम है, इसलिए निष्पादन याचिकाएं इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं होंगी और जिला न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत होंगी। आगे यह बताया गया कि पंचाट पर विधिवत मुहर नहीं लगी थी। अधिवक्ता ने दोनों पहलुओं पर संतुष्ट होने के लिए समय मांगा।

4. डिक्री धारकों के अधिवक्ता ने निष्पादन याचिकाओं पर विचार करने के लिए इस न्यायालय के अधिकारिता को उचित ठहराने की मांग की है, क्योंकि इस न्यायालय ने दोनों मामलों में माध्यस्थम और सुलह अधिनियम, 1996 (अधिनियम) की धारा 11(6) के तहत अधिकारिता का प्रयोग किया है और इसके अलावा इस न्यायालय ने पहले नियुक्त मध्यस्थ को प्रतिस्थापित करने के लिए अधिनियम की धारा 15(2) के तहत पुनः अधिकारिता (पुन: दोनों मामलों में) का प्रयोग किया है । डिक्री धारकों के अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि चूंकि अधिनियम की धारा 11(6) और 15(2) के तहत याचिकाएं इस न्यायालय में की गई थीं, इसलिए अधिनियम की धारा 42 के तहत, दोनों मामलों में वित्तीय अधिकारिता का मूल्य इस न्यायालय के न्यूनतम वित्तीय अधिकारिता से कम होने के बावजूद, इस न्यायालय के पास निष्पादन आवेदनों पर

विचार करने की विशेष अधिकारिता होगी। इस संबंध में **दमयंती बिल्डर्स बनाम भारत संघ** के मामले में इस न्यायालय की एकल पीठ द्वारा दिए गए निर्णय, 2003 (3) मध्य.. एलआर 530 पर भरोसा किया गया था। निस्संदेह उक्त निर्णय में यह माना गया कि माध्यस्थम अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन केवल इस न्यायालय के समक्ष ही आएगा, क्योंकि इस न्यायालय ने अधिनियम की धारा 11(6) के तहत अधिकारिता का प्रयोग किया है। मू.वि.या. 418/2004 में इस न्यायालय की एक अन्य एकल पीठ के दिनांक 13.12.2004 के आदेश में इसी आशय की कुछ टिप्पणियों पर भी भरोसा किया गया था ।

5. हालाँकि, मुझे लगता है कि इस न्यायालय के एकल न्यायाधीश का उपरोक्त निर्णय अब अच्छा कानून नहीं है। **रोडेमेडन इंडिया लिमिटेड बनाम इंटरनेशनल ट्रेड एक्सपो सेंटर लिमिटेड** (2006) 11 एससीसी 651 के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने इसके विपरीत विचार व्यक्त किया है। उक्त निर्णय के पैरा 8 में यह माना गया था कि अधिनियम की धारा 11(6) के तहत शक्ति उस धारा के तहत निर्दिष्ट पदनाम शक्ति है, न कि (सर्वोच्च) न्यायालय की, यद्यपि अब **एसबीपी एंड कंपनी बनाम पटेल इंजीनियरिंग लिमिटेड** (2005) 8 एससीसी 618 में दिए गए निर्णय के कारण इसे न्यायिक विशेषताएं रखने वाला अभिनिर्धारित किया गया है। निर्णय के पैरा 25 में आगे यह

अभिनिर्धारित किया गया कि न तो मुख्य न्यायाधीश और न ही उनका पदनाम धारा 11(6) के तहत "न्यायालय" है जैसा कि अधिनियम कि धारा 2(1)(ङ) के अंतर्गत अनुध्यात किया गया है और आगे कहा गया कि धारा 42 के तहत अधिकारिता का प्रतिबंध केवल धारा 2(1)(ङ) में परिभाषित "न्यायालय" पर लागू होता है।

6. सर्वोच्च न्यायालय के उक्त निर्णय का पालन इस न्यायालय की एक अन्य एकल पीठ ने **यूनियन ऑफ इंडिया बनाम एसआर कंस्ट्रक्शन कंपनी एवं अन्य** 144(2007) डीएलटी 580 के मामले में किया था और यह अभिनिर्धारित किया था कि इस न्यायालय द्वारा अधिनियम की धारा 11(6) के तहत आदेश पारित करने मात्र से इस न्यायालय को अधिनियम की धारा 42 के तहत अधिनियम की धारा 34 के तहत आपत्तियों पर विचार करने का विशेष अधिकार प्राप्त नहीं हो जायेगा, अन्यथा इस न्यायालय के पास उक्त आपत्तियों पर विचार करने के लिए धन-संबंधी अधिकारिता नहीं थी।

7. **पांडे एंड कंपनी बिल्डर्स (प्रा) लिमिटेड बनाम बिहार राज्य और अन्य** (2007) 1 एससीसी 467 के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया कि धारा 42 केवल आवेदनों पर लागू होती है न कि अधिनियम की धारा 37 के तहत अपीलों पर । इसी तर्क को लागू करते हुए, धारा 42 निष्पादन आवेदनों पर भी लागू नहीं होगी।

निष्पादन आवेदन अधिनियम की धारा 42 के अर्थ के भीतर "माध्यस्थम कार्यवाही" नहीं है और यह समझौते और माध्यस्थम कार्यवाही से उत्पन्न होने वाला पश्चातवर्ती आवेदन नहीं है। वास्तव में, माध्यस्थम कार्यवाही तब समाप्त हो जाती है जब माध्यस्थम पंचाट को रद्द करने के लिए आवेदन करने के समय अपास्त कर दिया जाता है और निष्पादन आवेदन पंचाट का प्रवर्तन होता है जो अधिनियम की धारा 36 के प्रावधानों के आधार पर सि.प्र.स. के तहत डिक्री का रूप ले लेता है।

8. इसलिए, डिक्री धारकों द्वारा प्रतिपादित कारणों के लिए निष्पादन आवेदन इस न्यायालय के समक्ष नहीं आते हैं। इस न्यायालय द्वारा अधिनियम की धारा 15(2) के तहत अधिकारिता का प्रयोग, अधिनियम की धारा 11(6) के तहत शक्ति के प्रयोग की निरंतरता में होने के कारण, धारा 42 को भी आकर्षित नहीं करेगा।

9. **काइनेटिक कैपिटल फाइनेंस लिमिटेड बनाम अनिल कुमार मिश्रा** 87 (2000) डीएलटी 405 में इस न्यायालय द्वारा अन्यथा अभिनिर्धारित किया गया है:

> "9. 'न्यायालय' की परिभाषा में प्रयुक्त शब्द, माध्यस्थम की विषय-वस्तु बनाने वाले प्रश्न का विनिश्चय करने की अधिकारिता रखते हुए, यदि वह वाद की विषय-वस्तु होती, और धारा 36 में प्रयुक्त

> अभिव्यक्ति, सिविल प्रक्रिया संहिता के अधीन पंचाट उसी रीति से प्रवर्तित किया जाता मानो वह न्यायालय की डिक्री हो, तो मेरे समक्ष उत्पन्न होने वाले मुद्दे का निर्णय करने के प्रयोजन या निर्णय के लिए भी प्रासंगिकता होती । पूर्वोक्त निर्णयों द्वारा निर्धारित अनुपात और 'न्यायालय' की परिभाषा में प्रयुक्त शब्दों और अधिनियम की धारा 36 के प्रावधान को ध्यान में रखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि माध्यस्थम और सुलह अधिनियम, 1996 के प्रावधानों के तहत किए गए एक निर्णय को सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत उसी तरह लागू किया जा सकता है जैसे कि यह न्यायालय की डिक्री थी। एक सिविल न्यायाधीश अधिकतम 1 लाख रुपये से अधिक की राशि के लिए डिक्री पारित करने के लिए सक्षम है। इसलिए 1 लाख रुपये से अधिक की राशि के लिए सिविल न्यायालय द्वारा पारित इस तरह की डिक्री को उसी न्यायालय में अर्थात सिविल न्यायधीश के न्यायालय में लागू किया जा सकता है। इसलिए, किसी वाद/कार्यवाही के उद्देश्य के लिए जिसकी विषय-वस्तु 1 लाख रुपये से अधिक न हो, जिले में मुख्य सिविल न्यायालय या मूल अधिकारिता सिविल न्यायाधीश का न्यायालय होगा। उपरोक्त निष्कर्ष पर पहुंचने पर मैं बख्शी लोचन सिंह के मामले (पूर्वोक्त) में इस न्यायालय के निर्णय से सहमत हूँ।

10. उपरोक्त सिद्धांतों को लागू करते हुए, दोनों निष्पादनो की विषय वस्तु 20 लाख रुपये से कम है, जो कि इस न्यायालय की न्यूनतम धन-संबंधी अधिकारिता है, इसलिए निष्पादन को सिविल प्रक्रिया संहिता

के अर्थ के भीतर न्यूनतम आर्थिक अधिकारिता के न्यायालय के समक्ष प्राथमिकता दी जानी चाहिए थी जो दिल्ली के जिला न्यायाधीश का न्यायालय है।

11. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **एम. अनसूया देवी बनाम एम माणिक रेड्डी** 2003 (9) स्केल 12 के मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि पंचाट पर मुहर न लगाने के संबंध में आपत्ति को मध्यस्थ पंचाट के प्रवर्तन के चरण में निपटाया जाना चाहिए , न कि अधिनियम की धारा 34 के तहत आपत्तियों के स्तर पर। स्टाम्प अधिनियम की दिल्ली में लागू अनुसूची 1क के अनुच्छेद 12 के अंतर्गत दिए गए पंचाट के अंतर्गत उस संपत्ति के मूल्य का 0.1% स्टाम्प शुल्क लगता है, जिससे वह पंचाट संबंधित है। दोनों मामलों में दिए गए अधिनिर्णयों पर विधिवत रूप से मुहर नहीं लगाई गई थी। डिक्री धारकों के लिए अधिवक्ता ने प्रस्तुतिकरण दिया था कि माध्यस्थम पंचाट को मूल राशि पंचाट के अनुसार विधिवत रूप से मुहर लगायी गयी थी । हालांकि, मैं उक्त विषय पर विचार करने से विरत हो रहा हूं, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि ये निष्पादन याचिकाएं जिला न्यायाधीश के समक्ष प्रस्तुत की जाए न कि इस न्यायालय के समक्ष।

12. तदनुसार, निष्पादन आवेदनों को इस न्यायालय के समक्ष विचारणीय अभिनिर्धारित नहीं किया जाता तथा उन्हें उपयुक्त न्यायालय

के समक्ष दाखिल करने के लिए डिक्री धारक को वापस करने का आदेश दिया जाता है। यदि डिक्री धारक चाहे तो इस न्यायालय के समक्ष दाखिल दोनों मामलों में मूल पंचाट भी विधि के अनुसार डिक्री धारक को वापस किए जा सकते हैं।

राजीव सहाय एंडलॉ
(न्यायाधीश)

02, जुलाई 2008
एम

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*